इकाई 13 'मानवीनी भवाई' का मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 मनुभाई पंचोली 'दर्शक' का अभिमत (मूल्यांकन)

13.3 चरित्र-चित्रण के बारे में डॉ. धीरेंद्र मेहता का अभिमत

13.4 नारी के चित्रण के बारे में भरत ना. भट्ट का अभिमत

13.5 कालू के बारे में डॉ. मणिलाल पटेल का अभिमत

13.6 माली के बारे में डॉ. पारुल राठोड का अभिमत

13.7 वातावरण चित्रण के बारे में रवीन्द्र पारेख तथा अन्यों के अभिमत

13.8 सारांश

13.9 प्रश्न

13.0 उद्देश्य

'मानवीनी भवाई' उपन्यास की अब तक (2002) लगभग चौदह आवृत्तियाँ (अधिकांशत: पुनर्मुद्रण) हो चुकी हैं। गुजराती के विशाल पाठक वर्ग में इस उपन्यास ने सारी लोकप्रियत हासिल की है। वैसे तो पन्नालाल पटेल के बारे के रचनाकारों द्वारा भी अच्छे और श्रेष्ठ उपन्यास लिखे गए हैं; परंतु 'मानवीनी भवाई' की श्रेष्ठता आज भी बरकरार है। उमाशंकर जोशी, सुंदरम तथा मेघाणी जैसे पन्नालाल के समकालीन सर्जकों ने भी 'मानवीनी भवाई' की प्रशंसा लोकजीवन का चित्रण करने वाली तथा अपने निजी जीवन दर्शन को प्रकट करने वाली औपन्यासिक कृति के रूप में की है। मेघाणी ने पन्नालाल को 'अपनी धरती का किसान' कहा है, उमाशंकर ने उन्हें भारतीय उपन्यासकारों में लोकजीवन को सूक्ष्म ढंग से तथा प्रवाहमयी भाषा में चित्रित करने वाला सर्जक कहा है। इस इकाई में पन्नालाल के बारे में लिखने वाले दूसरे समीक्षकों के अभिमत दिए जाएँगे। विशेष करके 'मानवीनी भवाई' की वर्णन कला, चरित्र-चित्रण संघर्ष निरूपण, वातावरण चित्रण, भाषा-संयोजन आदि महत्वपूर्ण घटकों के बारे में समीक्षकों के मत लेकर मूल्यांकन को प्रामाणिक बनाया गया है।

13.1 प्रस्तावना

किसी भी उपन्यास का सामाजिक जीवन के साथ अत्यंत धनिष्ठ संबंध होता है। उपन्यास प्राय: अपने समय के सामाजिक जीवन का विस्तारपूर्वक दस्तावेज होता है। ऐसा पात्रों के माध्यम से होता है अथवा परिवार या समाज की समस्याओं के माध्यम से अर्थात् उपन्यास का पहला सरोकार तत्कालीन सामाजिक जीवन के साथ ही होता है। वैसे तो उपन्यास में कल्पना का भी योगदान होता है, परंतु उसमें यथार्थ चित्रण की ही प्रधानता होती है।

'मळेला जीव' उपन्यास पन्नालाल की पहली महत्वपूर्ण कृति है। प्रेम और विरह को लेखक ने भावपूर्ण कथा के रूप में इस तरह से ढाला है कि बहुत-से लोग उसे प्रेम पर आधारित स्वच्छंदतावादी कृति मानते हैं। कला एवं रचना-कौशल के स्तर पर देखें, तो 'मळेला जीव' पन्नालाल की एक नखशिख सुंदर रचना है। पन्नालाल में मौजूद सर्जक यहाँ पर स्वाभाविक रूप में प्रकट हुआ है। कला के स्तर पर 'मानवीनी भवाई' मळेला जीव' की तुलना में कहीं-कहीं पर शिथिल रचना प्रतीत होती है; परंतु वह बात नगण्य है; क्योंकि किसी रचना की सार्थकता सिर्फ उसकी कलात्मकता में ही निहित नहीं होती। उसमें पात्रों के पुरुषार्थ का भी महत्व होता है। पात्रों के अडिग पुरुषार्थ के स्तर पर ' मानवीनी भवाई' अधिक सुंदर है। संवेदना तो जीव मात्र के प्रति करुणा जगाने वाली होती है। परंतु उस करुणा को कलात्मक ढंग से सभी चित्रित नहीं कर पाते। करुणा तथा संवेदना का श्रेष्ठ आलेखन 'मानवीनी भवाई' में हुआ है। पन्नालाल इस रचना में व्यक्तिगत छोटे-बड़े सुख-दुख को आधार बनाकर समग्र समाज में हाहाकार मचाने वाले अकाल जैसे महादुख तक पहुँच सके हैं। यह ठीक ही कहा गया है कि किसी साहित्यिक कृति की कलात्मकता की जाँच उसके कला नियमों या कला-मानदंडों के आधार पर करनी चाहिए; परंतु उस कृति की महानता की जाँच करने के लिए तो सामाजिक मूल्यों तथा जीवन के मानदंडों का ही आधार लेना चाहिए अर्थात् जीवन मूल्यों के आधार पर मूल्यांकन करने से 'मानवीनी भवाई' एक महान कलाकृति साबित होती है।

आदिकवि ने क्रौंच पक्षी के वियोग-विलाप से व्यथित होकर रामायण कथा की रचना की थी। महान कला हमेशा व्यक्तिगत वेदना और वियोग की अवगणना किए बिना आगे बढ़ती है अर्थात् महान कला के मूल में व्यक्तिगत वेदना ही निहित होती है। व्यक्तिगत जीवन की वेदनाएँ महान कृतियों में अंतत: समग्र सामाजिक जीवन की वेदना बन जाती हैं। महान् कृतियाँ व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन की वेदनाओं का चित्रण करते हुए जीवन के कितने ही सत्यों को उद्घाटित करती हैं। 'मानवीनी भवाई' पेट की भूख और प्रेम की भूख का, उत्कृष्ट कलात्मक आलेखन के द्वारा एहसास कराती है। इसके लिए पन्नालाल ने एक तरफ तो पारिवारिक और सामाजिक जीवन की कठिनाइयों तथा मानव स्वभाव की विचित्रताओं का इस्तेमाल किया है-जिसमें 'माली' जैसी 'असत्' पात्र के साथ अन्य 'सत्' पात्र जूझते हैं; तो दूसरी ओर कथा के उत्तरार्ध में अकाल और भूख की पीड़ा (असत्) के सामने सारा समाज जूझता है। गुजराती साहित्य में इस प्रकार की सर्जना पन्नालाल के पहले या बाद में भी बहुत कम देखने को मिलती है। ग्राम्य जीवन को आधार बनाकर लिखी गई यह रचना गांधीयुग के उत्तरार्ध की रचना है; फिर भी उसमें गांधीजी के मूल्यों के बजाय ग्रामीण जनता की यातनाओं का आलेखन हुआ है; तथा साथ ही भूख और भीख मनुष्य को किस तरह अशक्त और निरीह बना देती है, उसका मार्मिक चित्र इस रचना में देखा जा सकता है। उमाशंकर जोशी सहित गुजराती के लगभग सभी बड़े समीक्षकों ने 'मानवीनी भवाई ' के सभी पहलुओं का बारीकी से मूल्यांकन किया है; और उसकी कलात्मक उत्कृष्टता की सभी ने प्रशंसा की है। पन्नालाल के इस उपन्यास के कथावर्णन, वस्तु-चित्रण, वातावरण के आलेखन, संवाद-योजना, स्थानीय भाषा-शैली, संघर्ष आदि का विवेचन विस्तार से किया गया है। कुछ समीक्षकों के अभिमतों का उल्लेख हम यहाँ पर करेंगे।

13.2 मनुभाई पंचोली 'दर्शक' का अभिमत (मूल्यांकन)

श्री पन्नालाल पटेल की सर्जनशीलता का वर्णन प्रशंसा का विषय है? वह तो स्वत: सिद्ध है। रवींद्रनाथ या शरत्चंद्र के युगव्यापी प्रभाव से कोई भी संवेदनशील सर्जक बच नहीं सका

है-यह निर्विवाद है। परंतु देखने की बात यह है कि किस सर्जक ने उस प्रभाव को अपने कथासाहित्य में किस तरह से या किस रूप में उतारा है? वह प्रभाव सिर्फ अनुकरण में परिलक्षित होता है अथवा रचनाकार ने उसे आत्मसात् भी किया है?

पाठक को यह बरबस कहना पड़ेगा कि पन्नालाल ने 'मळेला जीव' तथा 'मानवीनी भवाई' में उस प्रभाव को आत्मसात् किया है। जीवी और राजू जो कुछ बोलती हैं, जो निर्णय लेती हैं, वह सब अपने ढंग से -अपनी आसपास की परिस्थिति में से लेती हैं। पहले से सोच-विचार कर वे ऐसा नहीं करतीं। वे तो दूसरी दिशा में जाने की तैयारी में होती हैं, कि तभी नयी परिस्थिति सामने आती है और वे एक निर्भर व्यक्ति की तरह नया निर्णय कर लेती हैं।

समाज के रीति-रिवाजों ने अथवा धर्म के विधि-विधानों ने उन्हें नियंत्रित नहीं रखा, बल्कि उन्हें नियंत्रित रखा उनकी स्वस्थ करुणा ने। राजू सोचती है कि कालू के साथ उसकी सगाई टूटने में, उसकी नयी ससुराल वालों का क्या दोष था? और कालू की बहू भली भी कहाँ दोषी है? तो फिर कालू का दोष इसमें कैसे निकाला जाए? अकाल के दौरान कालू राजू के यहाँ जाकर देखता है कि राजू के घर में खाने के लिए एक दिन के लिए भी अनाज नहीं है। वह उपवास करके दिन गुजार रही है। गाँवों में कोई ऐसा बचा नहीं जिसके पास अनाज हो। रोज घर के सामने ही मरने वालों की चिताएँ जलाई जाती हैं। घर के लोग कहीं दाना-पानी लेने गए हैं। भूख और चिंता से सूखी हुई राजू से कालू कहता है- 'तू तो पहचान में भी कहाँ आ रही है? घर में एक दाना भी नहीं?'

राजू हँसती है; परंतु पूरा शरीर फीका पड़ गया है, तो फिर उसकी हँसी में भी रंग कहाँ से आए? है थोड़ा-बहुत; एकदम से नंगा नहीं हो गए होंगे? परंतु कालू को उस पर विश्वास नहीं होता; वह कोठियों में धनुष डालकर देखता है- अंदर तो एकदम खाली है। दूसरे के घर आग लेने के लिए जाती राजू को देखकर वह कहता है-

'घर में अनाज हो, तब तो आग जलेगी न?' और राजू के वापस आते ही कहता है- 'भाड़ में जाए तमाकू! चल, आ जा मेरे साथ!'

राजू के चहरे को देखकर लगता है, वह हँसे या रोए? कालू आगे कहता है – मैं तो तुम्हें बेमौत मरने नहीं देख सकता!'

बेमौत तो सारा मुलुक मरेगा या मैं अकेली?....और फिर लोग क्या कहेंगे?.....लोग तो मरेंगे ही, पर जीव सब के एक जैसे ही हैं न?'

'लोग तो मरेंगे; पर मुझे लोगों की परवाह नहीं; उनका मुकाबला करने की हिम्मत मुझमें है; पर यहाँ जो सभी हैं, उनके भी जीव मेरे ही जैसे हैं!' यही है आत्मसात् का भाव।

राजू को समाज का भय नहीं है। किसी भी जमाने में प्राणवान् (साहसी) को समाज का भय नहीं होता-मृत्यु का भय नहीं होता। राजू कहती है- 'तुम्हें मौत से आश्चर्य हो रहा है; पर हम तो जहाँ जीवन का दाँव लगा कर बैठे हुए हैं। अभी से दिन में तीन-चार चिताएँ धधकती हुई हम यहाँ देखते हैं। इन्हीं के साथ एक दिन हमारी भी जलेगी।' प्राणवान् तो मृत्यु की अगवानी करते हैं; और यह विशेषता कहीं शास्त्र पढ़ने से नहीं आती, वह तो उनके साथ ही जन्म लेती है। जैसे फूलों को हजार बार मना करें, तो भी वे सुगंधि फैलाएँगे ही, वैसे ही प्राणवान को तो अपनी ज़िंदगी या मौत की परवाह किए बिना अपने साथ वालों को-अपने आसपास वालों को, अपनी हिम्मत का दान करते ही जाना है। महीने भर के लिए अनाज मिल जाने पर राजू खुशी से उछल पड़ती है- 'महीने भर में तो हम

बादशाहत खड़ी कर लेंगे।' मेहनतकश लोगों के आत्मविश्वास की यह ध्वनि है। रोज-रोज हल हाँकते-हाँकते, घन चलाते-चलाते, हँसिये चलाते-चलाते उनमें एक ऐसा आत्मविश्वास पैदा हो जाता है कि उनका बाहुबल जब तक सलामत है, तब तक कोई उनका क्या बिगाड़ सकता है? उधार की वस्तु चाहे जैसी भी हो, परंतु कला पर अधिकार के बिना, अपनी ज़मीन से जुड़े लोगों के आत्मविश्वास का सच्चा निरूपण नहीं किया जा सकता।

और उस कला का निरूपण करने के लिए लेखक ने फलक बनाया है 'छप्पनिया अकाल' को। उसके पात्रों की तेजस्विता, प्राणवत्ता, बेपरवाही, मनोमंथन तथा विकास गति को माध्यम बनाकर अकाल के संपूर्ण प्रभाव का वर्णन करने वाले प्रकरण हमारे लंबे समय तक काल-वर्णन के नमूने के रूप में याद किए जाएँगे।

'दर्शक' मानवीनी भवाई को सफल उपन्यास के रूप में महत्व देते हैं; और काल तथा अकाल के चित्रण को यादगार मानते हैं। दर्शक को ऐसे जुझारू पात्र पसंद हैं। कभी न टूटने वाले, परिस्थिति के साथ लड़ते रहने वाले और आत्मबल के सहारे संघर्ष में टिके रहने वाले पात्रों के बल पर ही यह उपन्यास एक उत्तम कलाकृति का दर्जा प्राप्त करता है। दर्शक का यह कथन ध्यान देने योग्य है।

13.3 चरित्र-चित्रण के बारे में डॉ. धीरेन्द्र मेहता का अभिमत

जाने-माने उपन्यासकार और गुजराती कथा साहित्य के समीक्षक डॉ. धीरेन्द्र मेहता ने 'मानवीनी भवाई' का मूल्यांकन सत् और असत् के बीच के संघर्ष के रूप में किया है। उपन्यास के मुख्य पात्र असद् से टक्कर लेते हैं और अंत तक काल के साथ कदम मिलाते हुए आगे बढ़ते हैं। उपन्यास के पूवार्ध में माली जैसी खलपात्र असद् का प्रतीक है, तो उपन्यास के उत्तरार्ध में अकाल और भूख असद् के प्रतीक हैं। धीरेन्द्र मेहता के ही शब्दों में कहें- 'पात्र-योजना पर ध्यान देने से इस कथा को बृहद पारिवारिक कथा कहा जा सकता है; वाला और परमा दो सगे भाई हैं; उनकी संतानों के बीच परंपरागत पैतृक ईर्ष्या और शत्रुता की घटनाएँ इसमें निरूपित हैं। परंतु 'मानवीनी भवाई' मात्र चचेरे भाइयों के बीच के वैर-विरोध की कथा बन कर नहीं रह गई है। इनका कारण यह है कि लेखक ने असद् के मूल को सामाजिक संबंधों में नहीं, बल्कि मानव मन में स्थित माना है; और घटनाओं में उसे सूत्र रूप में नियोजित करके उसका विस्मयजनक साक्षात्कार कराया है।' यही कारण है कि परमा मुखी (मुखिया) के घर वालों का दृष्टतापूर्ण व्यवहार मात्र अपने चचेरे भाइयों तक सीमित नहीं रहता; बल्कि ऐसा वे दूसरों के साथ भी करते दिखाए गए हैं।'

परमा की पत्नी माली के चरित्र में यह तत्व साकार हुआ है; और उसी की प्रेरणा से कथा आगे बढ़ती है। कालू के जन्म के समय उल्लास का वातावरण है; परंतु उस समय माली कहती है- 'यह भी कोई बात हुई!.....घर में पानी पीने का लोटा भी फूटा है; ऊपर से ऐसी खुशी किस काम की.....?'

इस उक्ति के रूप में मानो असद् अपनी उपस्थिति साबित कर रहा है; और आगे भी अपनी क्रियाशीलता के द्वारा घटनाओं का संयोजन करता रहता है। उधर ब्राह्मण बच्चे का भविष्य बताता है, और इधर परमा और रणछोड़ दोनों उल्टी भाषा बोलते हैं। परंतु माली की वाणी तो अभिशाप बन कर रह जाती है। वाणी और व्यवहार दोनों में उसकी ईर्ष्या, घमंड और वैरभाव प्रकट होता है। कालू की सगाई के समय तो वह अपने असली रूप में प्रकट होता है; और उसको तीव्र करने वाले प्रसंगों की रचना होती है। लड़की (राजू) का ननिहाल परमा मुखी के बेटे रणछोड़ के ससुराल में ही है। पर भलाई को सहन न कर

सकने वाली बुराई स्वजनों के बीच उभरते संबंधों को भी अपना ग्रास बनाती है। यह बात इस शुभ अवसर पर, परमा पटेल के घर में होने वाली हलचल से पता चलती है। ऐसे क्षण में कथा की गति रुक जाती है और पात्रों के वाणी-व्यवहार से दुष्टता प्रकट होने लगती है। लेखक का पूरा ध्यान माली पर है। उसके रोम-रोम में व्याप्त असद् (दुष्टता) उसे किस तरह से पीड़ित करता है, यह उसके वाणी-व्यवहार से पता चलता है।

'जा चुकी चुल्लू भर पानी में नाक रगड़ कर मर जा! निकम्मा! नामरद! कहीं जाकर साधू ..... फकीर हो जा न! और वो कहाँ गया नासपीटा रणछोड़? मुआ कहाँ से मेरी कोख में पैदा हो गया? ठेल दे अपनी उस राँड़ को उसके पीहर में।'

'माली का भूत' नामक प्रकरण में यह असद् (दुष्टता) माली की बैचनी बन कर खलबली मचाता है। उसका जीवंत चित्र माली की विविध प्रतिक्रियाओं में उभर कर सामने आता है। आधी रात को आँगन के खंभे की ओट लेकर कालू की माँ पर अकल्पनीय आरोप लगाती हुई माली, कालू की माँ के हाथों से मार खाने के बाद अपने घर वालों को बेहिसाब गालियाँ देती हुई माली, फिर थक कर मिलाप करती हुई माली, मंछाकाकी के सांत्वना देने पर और भड़कती हुई माली, सबको शांत देखकर खंभे से सिर पटकती हुई माली;-इन विविध स्थिति में असद् का ही कुरूप प्रकट होता है। यह असद् ही माली के द्वारा यह संकल्प कराता है- 'सगाई तो करा ली; पर इस कलमुँहे की शादी जो मैं होने दूँ, तो मुझे कुत्ती कहना.....।'

यह संकल्प रचना-सूत्र के रूप में कथा में आगे बढ़ता है। वाला डोसा की मृत्यु का प्रयोजन घटना-प्रवाह को आगे बढ़ाने से अधिक कुछ नहीं है। यहाँ चित्रण का जो मुख्यत मुद्दा है, वह यह कि माली कालू और उसकी माँ को अपने शिकंजे में लेती है। परमा और रणछोड़ को उनकी मदद के लिए जाने नहीं देती है। इसका क्या कारण हो सकता है? इसमें कालू के प्रति उसकी ईर्ष्या से अधिक तो उनकी स्वभावगत दुष्टता ही कारणभूत है। उसके इस दुष्ट स्वभाव के शिकार उसके खुद के घर वाले भी होते हैं और इस तरह उसकी दुष्टता का अत्यंत घृणास्पद रूप हमारे सामने प्रकट होता है। लेखक ने उसकी वाणी और उसके मनोजगत में इस दुष्टता को अच्छी तरह से विकसित होने दिया है।' (धीरेन्द्र मेहता, पन्नालाल का योगदान, पृ. 138-39)

असद् के दूसरे रूप का चित्रण पन्नालाल ने जिस तरह से किया है, उसकी तारीफ धीरेन्द्र मेहता 'मानवीनी भवाई' से ही उद्धरण लेकर इस प्रकार करते हैं-'इस असद् का बीभत्स रूप बाप-बेटे और पति-पत्नी के पारस्परिक व्यवहार में भी देखने को मिलता है, तो दूसरी ओर बिरादरी के पंचों को अपने वश में करके मनमाना करा लेने में भी देखने को मिलता है। माली का परिवार छिन्न-भिन्न हो जाता है, यह भी उस असद् की ही लीला है। कालू-राजू के प्रेम-बंधन को तोड़ने में भी उस असद् का ही हाथ है।' इस तरह अलग-अलग घटनाओं में यह असद् विविध रूपों में क्रियाशील दिखाई पड़ता है।

'मानवीनी भवाई' के उत्तरार्ध में यह असद् अपना रूप बदलता है। कथा के पूर्वार्ध में खलवृत्ति के रूप में उसने अपना परिचय दिया था, तो उत्तरार्ध में वह अकाल का रूप ध ारण कर लेता है। अकाल के वर्णन में लेखक की दृष्टि उसके असद् रूप को उद्घाटित करने पर केन्द्रित रही है। मनुष्य के विवेक का ह्रास करने वाली घटनाओं में वह दिखाई देता है। उसका परोक्ष वर्णन कालू-राजू की बातचीत में मिलता है। परंतु राजू से मिलकर लौटते समय तो कालू की आँखों के सामने असद् की प्रत्यक्ष लीला दिखाई देती है। 'भूखी भूतावळ' नामक प्रकरण का यह दृश्य देखिए -'बीस-पचीस अस्थि-पंजर उस मरे हुए ढोर

पर टूट पड़े थे; उनके दाँत ही छुरियाँ थीं; और आग तो उनके पेट में धधक ही रही थी न! कालू काँप उठा; क्षण भर के लिए तो वह शंका में पड़ गया–कहीं ये गिद्ध तो नहीं?'

उनका सारा क्रिया-कलाप गिद्धों की तरह ही था। कोई उन बच्चों को धक्के मार रहा था; तो कोई बुड्ढी मानो खून पी रही थी। ढोर के पाँवों को दो-दो, तीन-तीन जन दाँतों से काट रहे थे। तभी तलवार लिए दो जन आ धमके; और ढोर का मांस काट-काटकर बगल में तथा जाँघों के बीच में दबाने लगे-लंगोटी से ज्यादे कपड़ा हो, तब न उसमें बाँधें! तलवार का डर था, फिर भी कोई-कोई एकाध लोथड़ा झटक ही लेता।' (एजन, पृ.-140)

'मानवीनी भवाई' के प्रमुख पात्रों के विषय में भी गुजराती समीक्षा में बारीकी से लिखा गया है। यथार्थवादी उपन्यासकार होते हुए भी पन्नालाल प्रेम के चित्रण में सहज रूप से स्वच्छंदतावादी रहे हैं। स्त्री-पुरुष के यौवन का चित्रण करते समय उनकी कलम अधिक स्वच्छंद हो जाती है। 'मानवीनी भवाई' की नायिका का चरित्र-चित्रण गुजराती उपन्यासों के नारी चरित्रों में यादगार चित्रण है। उसके बारे में भरत ना. भट्ट लिखते हैं-

13.4 नारी के चित्रण के बारे में भरत ना. भट्ट का अभिमत

रचनाकार ने अपनी इस नायिका को दुर्लभ शरीर सौंदर्य दिया है। कथा के आरंभ में बेल-बूटेदार घाघरी और ओढ़नी उसने पहन रखी है। सिर पर मोतियों भरी गेडुल है और उसके ऊपर चमचमाता लोटा है। ऐसे बाह्य परिधान में सुशोभित राजू दूर से ही कालू को पहचान लेती है और मुस्करा उठती है। उस समय की बालिका राजू के देह सौंदर्य का वर्णन लेखक इस प्रकार करता है- 'वे छोटी और नुकीली आँखें हँस पड़ीं। हँसी के मारे उसका गोल-मटोल और गेहुँवा मुख थोड़ा चौड़ा हो गया। मोती सरीखे सफेद दाँत चमचमा उठे।'

कालू के साथ सगाई हो जाने के बाद की राजू जब कथा में प्रवेश करती है, तब वह दूर खड़े सारस युगल के बारे में अपने भाई कोदर से कुतूहलपूर्वक कुछ पूछती है-वह प्रसंग अनेक अर्थ-संदर्भों को जन्म देता है। कालू-राजू दोनों, भले ही विवाहित नहीं है; सिर्फ उनकी सगाई हुई है; परंतु बचपन से ही एक-दूसरे के प्रेमी हैं-इस अर्थ की भी कल्पना की जा सकती है। हमारी परंपरा में सारस युगल अनन्य प्रेम का प्रतीक रहा है। इस तरह से कालू-राजू के अनन्य प्रेम का आरंभ भी यहाँ से माना जा सकता है। राजू के व्यक्तित्व के मुख्य रहस्य, उसके प्रेम, उसकी भाव-प्रवणता और संवेदनशीलता आदि का प्रतीक भी उक्त प्रसंग को माना जा सकता है।

संपूर्ण उपन्यास में व्याप्त राजू का प्रभाव उसके व्यक्तित्व के इन दो पहलुओं पर आधारित है–देह सौंदर्य और संवेदनशीलता। देह सौंदर्य उसके प्रभाव का बीजारोपण करता है, तो उसकी संवेदनशीलता उसे अंकुरित और पल्लवित-पुष्पित करके उसे चिरंजीवी बनाती है। प्रथम पक्ष आकर्षक है, तो द्वितीय तृप्तिकारक।

राजू का देह सौंदर्य रचना और पात्र दोनों को सुशोभित करने के साथ-साथ कथा को अधिक व्यथा-मुक्त करने में सहायक हुआ है। अब मिलन असंभव होने पर भी राजू के प्रति कालू की लालसा और उसके विरह को उद्दीप्त करने का काम राजू का सौंदर्य की करता है। (एजन, पृ. 156)

राजू के बारे में एक दूसरी बात का उल्लेख करना भी आवश्यक प्रतीत होता है। उसके देह सौंदर्य की तुलना में उसके हृदय का सौंदर्य अधिक आकर्षक है। राजू मानो प्रेम और

भावना की अविरल धारा है। ऐसी सुंदर नायिका अभिमानिनी न हो, तो यही आश्चर्य! परंतु राजू में न तो अभिमान है न ही ईर्ष्या। इसका कारण शायद यह हो सकता है कि उसका पालन-पोषण कुदरत के बीच हुआ है। प्रेम और निष्कपट हृदय उसे प्रकृति से प्राप्त हुआ है। बुद्धि के मामले में पन्नालाल के नारी पात्र बहुत गहराई में नहीं उतरते। 'मळेला जीव' की 'जीवी' अपार वेदना के बीच भी कानजी के प्रेम के सहारे जी लेना चाहती है। इधर 'मानवीनी भवाई' की राजू उससे एक कदम आगे है। वह सामाजिक और प्राकृतिक आपदाओं को सहन करते हुए भी पति और प्रियतम दोनों को सँभालती है। कालू जैसा छैला-छबीला पति वह प्राप्त नहीं कर पाती; और जो पति मिलता है, वह रोगी है; फिर भी वह पति का घर जिस तत्परता और ज़िम्मेदारी से सँभालती है; उसे बेगार या बोझ नहीं समझती; – वह अदभुत है। उसका चरित्र कथा के उत्तरार्ध में निरंतर मानवीय गौरव की ऊँचाइयों की ओर बढ़ता जाता है – 'ससुराल जाने के बाद राजू के चरित्र का एक तीसरा पहलू उभर कर सामने आता है। यौवन के लक्षणों से भरपूर तन और मन वाली राजू, ससुराल आते ही अपने जवान तन में एक प्रौढ़ मन को धारण कर लेती है। राजू के इस परिवर्तन को लक्ष्य करके खुद लेखक नें लिखा है-'राजू यौवन की उस मस्ती, उच्छलंता, चुलबुलेपन और नटखटपन को मायके से ससुराल आते समय पाँच कोस पहले ही रास्ते में कहीं छोड़ आई थी।' वैसे तो राजू ने इस परिस्थिति को पहले ही स्वीकार कर लिया था; परंतु ससुराल आने के बाद उसे आत्मसात् कर लिया। राजू में होने वाले परिवर्तन का, उसके विकास का और रचना में धीरे-धीरे उभरते उसके महत्व का यह एक रहस्य है। जैसे-जैसे उसके ऊपर दुखों का दबाव बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उसकी सहनशीलता भी बढ़ती जाती है। कालू में निरंतर एक बेचैनी, दुख, हताशा, और कभी-कभी तो राजू द्वारा मिलने वाले सुख की हवाई कल्पना भी देखने को मिलता है; परंतु राजू में इन सबका नामोनिशान तक नहीं है। उसकी इन्हीं विशेषताओं की वजह से कालू भी राजू के सामने फीका पड़ जाता है। यदि हम रूपक की भाषा में कहें, तो कथा के मध्य भाग से गिरिशृंग पर पहुँचने की कालू की गति धीमी पड़ जाती है; जबकि राजू उस आरोहण में निरंतर आगे बढ़ती जाती है। 'स्त्री सर्वसमर्थ है'-नारी के बारे में प्रचलित यह कथन 'मानवीनी भवाई' के लेखक राजू में चरितार्थ किया है। यह हम कह सकते हैं। दुख और वेदना को अपनाकर उसे सहन करने अथवा आत्मसात् करने की यह नारी-शक्ति, यदि स्त्री में सहज रूप में-अंत:सत्त्व के रूप में हो, तो वह मंगलकारी होती है और उसमें से जन्म लेती है एक करुणामूर्ति। राजू का यही विकास उपन्यास के उत्तरार्ध को उर्ध्वगामी बनाता है।'(एजन, पृ.-159-60)।

13.5 कालू के बारे में डॉ. मणिलाल पटेल का अभिमत

उपन्यास के आधारभूत तत्वों में पात्र विशेष महत्वपूर्ण होते हैं; और उनमें भी मुख्य पात्र उपन्यास को मानव नियति के दर्शन तक पहुँचाते हैं। कालू ऐसा ही एक पात्र है। 'दर्शक' के शब्दों में कहें, तो कालू निर्भय और सच्चाई से भरा नवयुवक है। वह व्यक्तिगत झगड़ों से बचता है, दुखों को पचाता है और मेहनत से जी नहीं चुराता; अर्थात् वह समय को बर्बाद करने में विश्वास नहीं करता। परंतु बाहर से वह जितना सरल दिखाई पड़ता है, अंदर से उसका व्यक्तित्व उतना ही जटिल और उलझा हुआ है। एक तरफ़ तो वह राजू के प्रेम और साहचर्य के लिए तड़पता है और दूसरी तरफ़ उसे भली के साथ घर-परिवार चलाना पड़ता है। खेती-बाड़ी, सामाजिक कार्य और सबकी देखभाल की ज़िम्मेदारी उसके सिर पर है। अन्याय के सामनें आवाज़ उठाते हुए और अकाल के समय में तलकचंद मुंशी की गाड़ी को लुटवाते हुए कालू का रूप अनोखा है। जिस तरह राजू के विरह में उसकी

जिजीविषा खंडित नहीं होती, उसी तरह अकाल की वेदना में उसे भगवान का यह प्रकोप अच्छा नहीं लगता। इसीलिए वह ईश्वर को भी भला-बुरा कह बैठता है। अंततः वह भी एक लाचार आदमी है; परंतु किसान का बेटा होने के नाते वह भीख माँगने के लिए हाथ नहीं बढ़ाता। इसमें उसका आत्मगौरव छिपा हुआ है। 'भूखे से भी अधिक खराब भीख है।' यह कहकर कालू मनुष्य जीवन की निस्सहायता को प्रकट करता है। राजू के प्रति अपने अपार प्रेम के कारण वह समय-समय पर तरह-तरह की बातें सोचता रहता है। जैसे-राजू नाना के साथ घर बसाना चाहेगी, तो वह खुद उसे ऐसा करने से रोकेगा; और नहीं तो वह साधु बन जाएगा; यहाँ तक तो ठीक, परंतु जब वह और भी दुर्बल मन से यह सोचने लगता है कि क्या राजू अपने पति दयाळजी को सचमुच जिलाना चाहती है? तो यहाँ पर एक प्रेमी के रूप में कालू की सीमा का पता चलता है। कालू कोई गुणों की गठरी नहीं है; यह एक अच्छी बात है। लेखक ने उसे खुले मन वाले व्यक्ति के रूप में पेश किया है, जो अच्छे-बुरे का विचार करता है, दुख से दुखी होता है और वेदना उसे पीड़ित करती है। गुजराती उपन्यास के नायकों में कालू का चरित्र विशिष्ट है। (मणिलाल पटेल)

विश्व के उपन्यास साहित्य में मानवीय संवेदना से भरपूर उत्कृष्ट नारी पात्रों की संख्या बहुत होगी; परंतु दुष्टता और तुच्छता से भरपूर माली डोसी जैसा स्त्री पात्र विरल ही होगा। पति, पुत्र, बहुओं या अन्य परिजनों को सुख से न जीने देने वाली माली ईर्ष्या, द्वेष और असत् का प्रतीक है। माली के बारे में उसके सर्जक पन्नालाल पटेल खुद ही कहते हैं-'हँसुये के दाँत से तो कुछ बच भी जाता है; पर मुँह के दाँत (जीभ की धार) से तो कुछ नहीं बचता।' ऐसी माली डोसी 'मानवीनी भवाई' की पूर्वार्ध की कथा का संचालन करती है, उसे गति देती है। माली डोसी के बहाने पन्नालाल ने ग्रामीण समाज की विकृतियों को और मनुष्य की कुटिलता को मूर्त रूप दिया है। माली डोसी के विषय में डॉ. पारुल राठोड का एक अभिमत ध्यान देने योग्य है-

13.6 माली के बारे में डॉ. पारुल राठोड का अभिमत

'माली डोसी की ईर्ष्यालु मनोवृत्ति और परोक्ष रूप से सत्ता का संघर्ष इस उपन्यास में मुख्य भूमिका निभाते हैं। वाला पटेल की मृत्यु के बाद परिस्थिति बदल गई। परमा पटेल कालू को गोद में लिए हुए है। नाथा और उसका पति भी कालू के परिवार की हमदर्द है। माली ईर्ष्यावृत्ति को संतुष्ट करने के लिए कोई मौका नहीं मिलता; इतना ही नहीं, परंतु निरंतर उसे पराजय ही मिलती है। रूपा के खेत में हल चलाने और हेंगा (पाटा) के नीचे आ जाने की घटना भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण बन जाती है। माली की अमानवीयता यहाँ पूर्ण रूप से प्रकट होती है। अंततः रूपा की सात्त्विकता की विजय होती है। उस समय माली की दशा कैसी हो जाती है, लेखक के शब्दों में 'पानी के बिना तड़पती मछली' और 'तमाशा देखने आई माली का मुँह मानो काटो तो खून न निकले।'

सत् और असत् के बीच के संघर्ष में सत् हमेशा विजयी होता है; फिर भी पन्नालाल ने इस उपन्यास में यथार्थ परिस्थिति का चित्रण किया है; जिसमें माली डोसी की प्रेरणा और रणछोड़, नाना, पेथा पटेल जैसे पंचायतियों के प्रपंच के कारण कालू-राजू को बिछड़े सारस युगल की तरह जिंदगी भर दुख झेलना पड़ता है। बिरादरी के पंच जैसी सामाजिक ताकतों पर माली डोसी जैसी असामाजिक शक्तियाँ अपना वर्चस्व कायम रखती हैं। यहाँ पर माली डोसी की कुटिलता पूर्णतः सफल होती है। जिसके कारण कालू और राजू को विरही-प्रणयी के रूप में ही नहीं, दामाद और काकी सास के नये संबंध के दायरे में जीना पड़ता है। (एजन, पृ.-166-67)

13.7 वातावरण चित्रण के बारे में रवींद्र पारेख तथा अन्यों के अभिमत

सर्जक पन्नालाल ने भी वहम, अंधविश्वास तथा कुरीतियों के निरूपण में यथार्थवादी दृष्टि अपनाई है। परंतु उन्होंने अपने पात्रों को उनकी सामाजिक स्थिति तथा अन्य दुर्बलताओं से ऊपर उठते हुए भी दिखाया है; कहीं-कहीं तो उनके पात्र इसके लिए विद्रोह करते हुए भी दिखाई पड़ते हैं। प्रचार या नारेबाज़ी न लगे, इसका पूरा ध्यान रखते हुए वे लोकमत को बदलने में भी सफल रहे हैं। फूली डोसी या रूपा जैसी स्त्रियाँ परंपरागत मर्यादाओं में रहते हुए विवेकपूर्वक और स्वाभिमानपूर्वक जिंदगी जीती हैं; परंतु साथ ही आवश्यक होने पर स्वतंत्र निर्णय लेने में भी पीछे नहीं हटतीं। इस तरह उनके पात्रों में गुणात्मक परिवर्तन दिखाई पड़ता है। किंतु दूसरी ओर कालू-राजू जैसे पात्र प्रचलित रिवाजों के वशीभूत नहीं होते; परंपरा से कोई लाभ भी नहीं उठाते; परंतु अपनी निष्क्रियता की वजह से अर्थात् स्वतंत्र निर्णय न कर सकने की वजह से उन्हें बहुत कुछ सहना पड़ता, दुख भोगना पड़ता है। इन सब में जहाँ एक ओर व्यक्तिगत स्वार्थ के विपरीत लोकहित में परिवर्तन आता है, वहीं वे सामाजिक परिवेश से ऊपर उठते दिखाई पड़ते हैं। ऐसे स्थलों में निश्चित रूप से रचनाकार की रचनाशीलता या सर्जनात्मकता का परिचय मिलता है। पापी पेट के लिए लाचार फूली डोसी डाकिन के नाम से जानी जाती हैं, फिर भी वह ओझा-सोखा को ललकारने का भी सामर्थ्य रखती है। दूसरी तरफ शास्त्र में स्त्रियों को हल चलाना मना है – ऐसी लोकमान्यता के विरुद्ध परिस्थितिवश रूपा चुपचाप उठ खड़ी होती है; ऐसी क्रांति अनिवार्य परिस्थिति के कारण ही संभव हो पाती है; अर्थात् यथार्थ के बीच से उभरती यह साहसपूर्ण क्रियाशीलता रचनाकार का एक प्रशंसनीय जीवनदर्शन बन जाती है; कारण कि उक्त स्त्रियों का यह व्यवहार समाज में गुणात्मक परिवर्तन लाने और लोकमत जागृत करने में निर्मित बनता है। रूपा गाँव के लोगों से या उनके कोप से डरती तो है; परंतु वह यह भी जानती है कि डरने से काम चलने वाला नहीं है। कालू की उम्र अभी छोटी है; ऐसी स्थिति में रूपा सगे-संबंधियों के सहारे पड़ी रहने के बजाय खेत में हल चलाने का साहस करती है। वह किसी की परवाह नहीं करती; इसलिए लोगों को उसकी दृढ़ता की प्रतीति होती है। वैसे भी समूह हवा का रुख देख कर व्यवहार करता है। यह कहावत रूपा के मामले में चरितार्थ होती है। रूपा यदि कटिबद्ध नहीं होती, तो दुख ही भोगती। वह कटिबद्ध हुई, इसलिए सफल हुई; और जब सफल हुई, तब उसका तिरस्कार करने वाले लोग उसमें 'सत्' के दर्शन करने लगे; रूपा की 'भूखी आँत सराप देगी' इस भय से उसके प्रति सहानुभूति जताने लगे। इस तरह से रूपा का साहस दु:साहस बनने से बच जाता है।

रूपा जैसी औरत यदि मदद माँगे, तो माली उसे मदद करने को तैयार है; परंतु रूपा किसी की खुशामद किए बिना स्वतंत्र निर्णय लेती है और वह भी केवल आत्मसम्मान बनाए रखने के लिए और अनिवार्य परिस्थिति में लेती है। इस कारण से लोग धार्मिक-सामाजिक मान्यताओं के बारे में पुन: विचार करने के लिए प्रेरित होते हैं।

दूसरी तरफ़ माली जैसी स्त्री केवल 'असत्' को समर्थन देती है। उसे जहाँ अधिकार नहीं मिलता, वहाँ वह खुद ही प्राप्त कर लेती है; और जिद्दी इतनी कि जो चाहती है, वह करती है और दूसरों से करा कर ही दम लेती है। (गुजराती साहित्य को माली जैसी खलनायिका संभवत: आज तक दूसरी नहीं मिली।) शत्रुता उसकी अनिवार्यता

है। कालू के प्रति उसकी अपनी सहानुभूति तो है ही नहीं; परंतु उसके अपने परिवार वालों की भी सहानुभूति उसे न मिले, इसकी चिंता उसे सताती रहती है। कालू को वह 'कलमुँहा' ही कहती है। राजू के साथ कालू की शादी न हो, इसके लिए वह कोई भी प्रपंच करने से नहीं चूकती; और विडंबना यह कि इसमें वह सफल भी हो जाती है।

एक तरफ राजू और भली जैसी स्त्रियाँ हैं, जो समाज-स्वीकृत मान्यताओं और परंपराओं का पालन करते हुए जीती हैं और शोषित तथा पीड़ित होती हैं; परंतु दूसरी ओर माली या फूली डोसी जैसी स्त्रियाँ हैं, जो परंपरा के भय को आगे करके मनमानी करती हैं और करवाती हैं। और वह भी इस हद तक कि वे विद्रोह न करें, तो समाज उन्हें ठीक ढंग से जीने नहीं देता और उन्हें राहत महसूस नहीं करने देता। विडंबना यह कि इस तरह से प्राप्त की गई मुक्ति नकारात्मक वृत्ति का पोषण करती है; जबकि रूपा का निर्णय लोकहित में तथा रूढ़ियों-रिवाजों को बदलने की ओर अग्रसर है। साथ ही उसकी क्रांति की यह भावना ऊपर से ओढ़ी हुई नहीं है। ('मानवीनी भवाई : सामाजिक परिवेश और सर्जक' नामक लेख से; लेखक रवीन्द्र पारेख)।

पन्नालाल ने 'मानवीनी भवाई' में परिवेश का भी चित्रण दो स्तरों पर किया है-एक स्तर वह है, जिसे हमने अभी देखा; और वह है सामाजिक परिवेश का स्तर। उस स्तर पर रीति-रिवाजों, रूढ़ियों-मान्यताओं और पात्रों के मानस का चित्रण हुआ है। पन्नालाल की एकाधिक रचनाओं में सामाजिक परिवेश का ऐसा चित्रण यथार्थ की जमीन पर हुआ है। इससे उनकी कथा अत्यंत जीवंत तथा सहज ग्राह्य बन जाती है। गुजरात के पूर्वोत्तर इलाके का लोकजीवन वहाँ के लोकतत्वों के साथ विस्तार से वर्णित हुआ है। पन्नालाल की कथाओं में ये लोकतत्व अतिविशिष्ट घटक बन कर आते हैं। ये लोकतत्व कहावतों, मुहावरों, दंतकथाओं, लोककथाओं के रूप में उपस्थित होते हैं। इन लोकतत्वों के माध्यम से ही उनकी सर्जकता प्रकट हुई है। नि:संकोच हम कह सकते हैं कि महान् लेखक ही ऐसी सफलता प्राप्त करते हैं।

परिवेश या वातावरण चित्रण का दूसरा स्तर प्रकृति-वर्णन के रूप में सामने आता है। गाँव की प्रकृति, ऋतुओं का बदलते रहना, खेत-खलिहान और चारागाहों के चित्र पन्नालाल एक कुशल कवि की तरह उभारते हैं। यहाँ पर भी पन्नालाल की सर्जकता काफी आस्वाद्य बन जाती है। कम शब्दों में वे खेत-खलिहान, ऋतुओं आदि के चित्र खींचते हैं और उसमें पात्रों को विचरण करने के लिए छोड़ देते हैं। पन्नालाल की यह उपलब्धि भी विरल है। (माणिलाल पटेल)।

लल्लूभाई बी. पटेल अपनी पुस्तक 'जानपदी उपन्यासकार पन्नालाल पटेल' (आंचलिक उपन्यासकार पन्नालाल पटेल) में वातावरण चित्रण और वर्णन कला के बारे में पन्नालाल की खूबियों का उल्लेख करते हुए लिखते हैं-

'कृषि संस्कृति और पारिवारिक जीवन के हरेक ऋतु में बदलते दैनिक क्रिया-कलापों का हूबहू चित्रण करना पन्नालाल के लिए सहज है। वातावरण चलचित्र की तरह आँखों के सामने साकार हो उठता है। उदाहरणार्थ- 'सूद द्वादशी की रात; आसमान में चंद्रमा..... हल्की परंतु मखमली चाँदनी.....मानो ताराओं से खचित चादर बिछी हो; धरती और आसमान की सीमारेखा बनाती नदीतट की वृक्षावलियाँ; झिलममिलाते तारे .... मन की कल्पना जैसे गाँव और पहाड़ियों के धुँधले चित्र, ... चारों और गहरी शांति.....आँखों

से भी महसूस किया जा सके, ऐसी शांति!...' ऐसे सौन्दर्यपूर्ण, विराट और विधाता द्वारा निर्मित चित्र की झलक पन्नालाल दिखाते हैं। स्थान और काल की विविध रूपलीला को पन्नालाल उसके अंत:बाह्य वैभव के साथ एक मोहक रूप देते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य के वर्णन में तो कल्पना की उड़ान हैं। चित्रात्मकता, भावोत्पादकता, काव्यात्मकता और मूर्तता का उनमें बहुत अच्छा सामंजस्य हुआ है। पन्नालाल की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, शाब्दिक कल्पनाशीलता, छोटी-छोटी बातों का विस्तार से आलेखन, भाषा-प्रयोग की कुशलता और मानव मन की जटिलता के अंकन की उनकी खूबी तुरंत ध्यान खींचती है। बदलती ऋतुओं की तरह रात-दिन के वातावरण के चित्रण पन्नालाल बड़ी सहजता से कर जाते हैं। (देखिए -मानवीनी भवाई, पृ. 53 से 55 तथा पृ. 283, 292 आदि)

13.8 सारांश

इस चौथी इकाई में हमने पन्नालाल पटेल साहित्य समीक्षकों के अभिमत और उनके मूल्यांकन से परिचित हुए। 'मानवीनी भवाई' के समीक्षको में पन्नालाल पटेल की ऊँची सर्जकता के बारे में दो मत नहीं है। ग्रामीण समाज, उसके जीवन तथा उसके आसपास के परिवेश को चित्रित करने में पन्नालाल माहिर हैं। समीक्षकों के मूल्यांकन से यह बात हमें जानने को मिली। वर्णन कला की दृष्टि से 'मानवीनी भवाई' अत्यंत सुगठित रचना है। फिर भी संरचना की दृष्टि से 'मळेला जीव' में अनुभूति की सघनता और रचना का गठन अधिक प्रौढ़ है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से कहें, तो पन्नालाल पटेल के नारी पात्र अधिक महत्वपूर्ण हैं। ऊपर हमने राजू तथा माली के चरित्र की समीक्षा द्वारा उनकी उत्कृष्टता को देखा। यह उपन्यास 'तन-मन की भूख' का मार्मिक दर्शन हमें कराता है। व्यक्ति से समाज की ओर बढ़ती इस उपन्यास की कथा यथार्थ चित्रण का भी एक नमूना है। भाषा-शैली तथा संवादों से लेकर पात्रों के संघर्ष आदि का निरूपण रचनाकार ने बड़ी सावधानी से किया है। समीक्षकों ने इन सारे पहलुओं पर प्रकाश डाला है। इस इकाई में 'मानवीनी भवाई' के रचनागत विविध घटकों का मूल्यांकन प्रस्तुत करके पाठकों को इस रचना की विशेषताओं से परिचित कराया गया है।

13.9 प्रश्न

1. 'मानवीनी भवाई' दर्शक की दृष्टि से एक उत्तम कृति है। स्पष्ट कीजिए।
2. 'मानवीनी भवाई' के मुख्य पात्र राजू और कालू के बारे में लिखिए।
3. 'माली' इस उपन्यास में कैसी-कैसी दुष्टता करती है? उल्लेख कीजिए।
4. परिवेश-चित्रण के संबंध में 'मानवीनी भवाई' की विशेषताएँ बताइए।
5. विविध समीक्षकों के मतों का उल्लेख करते हुए 'मानवीनी भवाई' की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।